[2014] 1 एस. सी. आर 848

संजय कुमार

बनाम

बिहार राज्य एवं एक अन्य

(2011 की विशेष अनुमति याचिका (दांडिक) सं..9967)

28 जनवरी, 2014

[डॉ.बी. एस. चौहान, न्यायमूर्ति, चेलामेश्वर और एम. वाई. एक्बाल, न्यायमूर्तिगण]

अभिवेदन:

भ.दं.सं. की धारा 406 और 420 तथा धारा 12 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए शिकायत। परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138- उच्च न्यायालय द्वारा खारिज- शिकायतकर्ता द्वारा विशेष अनुमति याचिका- याचिकाकर्ता को नोटिस- शिकायतकर्ता को यह दिखाने के लिए कि संस्था फर्जी थी जैसा कि उसने दलील दी थी- याचिकाकर्ता ऐसी दलीलों को नजरअंदाज करने की मांग कर रहा है - निर्णय: दलीलें पक्षकारों के ज्ञान के अनुसार सत्य होनी चाहिए और यदि कोई व्यक्ति ऐसी भ्रामक दलीलें देता है, तो उसे न केवल न्यायालय द्वारा किसी भी प्रकार की छूट देने से इनकार किया जा सकता है, बल्कि उस पर झूठी गवाही का मुकदमा भी चलाया जा सकता है- यदि याचिकाकर्ता द्वारा दी गई दलील सच है, तो वह उसे नजरअंदाज करने की मांग नहीं कर सकता- यदि यह झूठा है और चूंकि ऐसा बयान शपथ पर दिया गया था, तो उस पर झूठी गवाही का मुकदमा चलाया जा सकता है - इसके अलावा, ऐसी दलील प्रासंगिक है या नहीं, यह न्यायालय द्वारा तय किया जाने वाला मामला है और साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 165 के तहत, न्यायालय को पक्षकार से प्रासंगिक या अप्रासंगिक प्रश्न पूछने का अधिकार है और पक्षकार या उनके अधिवक्ता किसी भी ऐसे प्रश्न पर कोई आपत्ति नहीं उठा सकते। - याचिकाकर्ता के आचरण की निंदा की गई - दण्ड प्रक्रिया संहिता अधिनियम, 1973 - धारा 482 - साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 165।

अभ्यास और प्रक्रियाः

अभिलेख अधिवक्ता - निर्देशों के बावजूद न्यायालय में पेश नहीं होना - अभिनिर्धारितः रामेश्वर प्रसाद गोयल के मामले में, न्यायालय ने माना है कि यदि अभिलेख अधिवक्ता न्यायालय में पेश नहीं होता है, तो उसका आचरण न्यायालय की दांडिक अवमानना के बराबर हो सकता है - वर्तमान मामले में, अभिलेख अधिवक्ता ने न्यायालय के आदेश के प्रति तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया, जिसमें उसे न्यायालय में पेश होने का निर्देश दिया गया था - उसने उस अधिवक्ता के लिए भी कोई उपस्थिति दर्ज नहीं की थी जो पेश हुआ था, न ही उक्त अधिवक्ता ने उसका नाम बताया था - न्यायालय अभिलेख अधिवक्ता के आचरण को गंभीरता से लेती है और उसे चेतावनी देती है कि वह एक अधिवक्ता और एक अभिलेख अधिवक्ता के आचरण के अनुरूप उचित तरीके से व्यवहार करे, अन्यथा न्यायालय उसके खिलाफ कार्रवाई करेगी - उसके आचरण पर न्यायालय कड़ी नजर रखेगी।

के सन्दर्भ में : रामेश्वर प्रसाद गोयल **(2014) 1 एससीसी 572-सी** का अवलम्बन किया गया।

निर्णयज विधि संदर्भ

(2014) 1 एस. सी. सी. 572 संदर्भित कंडिका 5

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः विशेष अनुमति याचिका (दांडिक) सं. 9967 वर्ष 2011.

सीआरएलएम सं. 13116/2009 में पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 22.07.2011 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलार्थी के लिए मनु शंकर मिश्रा।

उत्तरदाताओं के लिए गोपाल सिंह, चंदन कुमार।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश दिया गया था

आदेश

1. यह विशेष अनुमति याचिका, पटना उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक विविध सं.

13116/2009 में पारित दिनांक 22.7.2011 के आक्षेपित निर्णय और आदेश के विरुद्ध दायर की गई है, जिसमें उत्तरदाता सं. 2 के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही को अभिखंडित कर दिया गया था और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे आगे 'सीआरपीसी' कहा जाएगा) की धारा 482 के अंतर्गत आवेदन स्वीकार किया गया था।

2. इस याचिका को उत्पन्न करने वाले तथ्य और परिस्थितियां इस प्रकार हैं:

क. याचिकाकर्ता ने दावा किया कि उसे निजी उत्तरदाता सं. 2 ने एक फर्जी डेंटल कॉलेज में एक वर्ष की अवधि के लिए वरिष्ठ व्याख्याता के पद पर नियुक्त किया था और वेतन भुगतान के लिए 12 उत्तर-दिनांकित चेक जारी किए थे, जिनमें से 9 चेक बाउंस हो गए थे। शिकायतकर्ता-याचिकाकर्ता ने उत्तरदाता सं.2 को कानूनी नोटिस भेजा, लेकिन उन्हें जवाब दाखिल करने के लिए पर्याप्त समय दिए बिना, भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे आगे 'आईपीसी' कहा जाएगा) की धारा 34, 403, 404, 406, 408, 418, 420 और 504 तथा परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (जिसे आगे 'एनआई एसीएफ' कहा जाएगा) की धारा 138 के तहत दानापुर, पटना के दंडाधिकारी के समक्ष शिकायत दर्ज कराई।

ख. दानापुर के विद्वान दंडाधिकारी ने दिनांक 12.5.2008 के एक आदेश द्वारा निजी उत्तरदाता को 12.6.2008 को उपस्थित होने के लिए बुलाया था, क्योंकि *प्रथम दृष्टया* उनका मानना था कि याचिकाकर्ता द्वारा भ.दं.सं. की धारा 406, 420 और एनआई अधिनियम की धारा 1 के तहत मामला बनाया गया था। निजी उत्तरदाता ने उच्च न्यायालय में याचिका दायर करके उक्त आदेश को चुनौती दी, जिसे विभिन्न आधारों पर, अन्य बातों के साथ-साथ, उक्त निर्णय और आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया है कि पक्षों के बीच एक वर्ष की सेवा के लिए एक समझौता हुआ था और समझौते की एक शर्त यह थी कि याचिकाकर्ता 3 वर्ष पूरे होने तक संस्थान से इस्तीफा नहीं देगा। इसके अलावा, याचिकाकर्ता ने आरोपी को कानूनी नोटिस का जवाब देने के लिए पर्याप्त समय भी नहीं दिया, क्योंकि उसने नोटिस की तारीख के करीब ही शिकायत दर्ज की थी। उच्च न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि

अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पता चले कि निजी उत्तरदाता को कभी नोटिस दिया गया था और अंततः उक्त याचिका को इस आधार पर स्वीकार कर लिया कि यह दीवानी प्रकृति का मामला था, क्योंकि यह वेतन की वसूली का मामला था।

ग. पीड़ित याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया और याचिका में कहा कि आरोपी व्यक्ति एक फर्जी संस्थान चला रहे थे और उन्होंने याचिकाकर्ता को कुछ शर्तों पर नियुक्ति की पेशकश की थी और उसमें काम करने के बावजूद उसे वेतन नहीं दिया गया।

इसलिए यह अपील दायर की गयी है।

3. इस मामले में, याचिकाकर्ता की ओर से न्यायालय में पेश हुए अधिवक्ता ने खुद को सिर्फ़ एक प्रतिनिधि अधिवक्ता बताया था। एडवोकेट-ऑन-रिकॉर्ड (संक्षेप में 'एओआर') ने न्यायालय में पेश होने वाले अधिवक्ता के नाम का उल्लेख करते हुए कम से कम एक पर्ची भेजने का भी शिष्टाचार नहीं दिखाया। इस प्रकार, ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में, हमें न्यायालय में पेश होने वाले अधिवक्ता का नाम जानने का भी कोई फ़ायदा नहीं था।

4. इससे पहले, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता को स्वयं कारण बताओ नोटिस जारी कर पूछा था कि यदि यह एक फर्जी संस्थान था, तो याचिकाकर्ता के उसमें शामिल होने और एक वर्ष तक वहाँ सेवा जारी रखने का क्या कारण या औचित्य था। उक्त कारण बताओ नोटिस के उत्तर में, याचिकाकर्ता ने दलील दी कि ऐसी दलीलों को नज़रअंदाज़ किया जाना चाहिए और इस याचिका के निपटारे के उद्देश्य से उन पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। हमें किसी पक्षकार को याचिका में दलील पेश करने और फिर उसे नज़रअंदाज़ करने के लिए न्यायालय में दलील पेश करने की अनुमति देने का कोई कारण नहीं दिखता क्योंकि इस तरह के मुद्दे का मामले के गुण-दोष पर कोई असर नहीं पड़ता क्योंकि यह पूरी तरह से अप्रासंगिक है। दलीलें पक्षकारों की जानकारी के अनुसार सत्य होनी चाहिए और यदि कोई व्यक्ति ऐसी भ्रामक दलीलें देता है, तो उसे न केवल न्यायालय द्वारा किसी भी प्रकार की छूट

देने से इनकार किया जा सकता है, बल्कि उस पर झूठी गवाही का मुकदमा भी चलाया जा सकता है। यदि याचिकाकर्ता द्वारा दी गई दलील सही है, तो वह उसे नज़रअंदाज़ करने की मांग नहीं कर सकता। यदि यह झूठी है और चूँकि ऐसा बयान शपथ पर दिया गया है, तो उस पर झूठी गवाही का मुकदमा चलाया जा सकता है। इसके अलावा, ऐसी दलील प्रासंगिक है या नहीं, यह न्यायालय द्वारा तय किया जाने वाला मामला है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 165 के तहत, न्यायालय को पक्षकार से प्रासंगिक या अप्रासंगिक प्रश्न पूछने का अधिकार है और पक्षकार या उनके अधिवक्ता ऐसे किसी भी प्रश्न पर कोई आपत्ति नहीं उठा सकते।

5. ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में, याचिकाकर्ता द्वारा देश की सर्वोच्च न्यायालय से उसके द्वारा की गई दलीलों को नज़रअंदाज़ करने का अनुरोध करने के दुस्साहस की निंदा करने के लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं। बहरहाल, इस न्यायालय ने इस मामले की पहली सुनवाई के समय ज़ोर देकर कहा था कि अभिलेख अधिवक्ता, श्री मनु शंकर मिश्रा बहस के समय न्यायालय में उपस्थित रहें और उनकी उपस्थिति के लिए मामले को भी टाल दिया था। दूसरे दौर में, हमें सूचित किया गया कि अभिलेख अधिवक्ता ने न्यायालय में आने से इनकार कर दिया है। हम इस अभिलेख अधिवक्ता के आचरण को बहुत गंभीरता से लेते हैं, विशेष रूप से इस न्यायालय के निर्णय के मद्देनजर: *रामेश्वर प्रसाद गोयल, (2014) 1 एससीसी 572,* जिसमें इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से माना है कि यदि अभिलेख अधिवक्ता न्यायालय में उपस्थित नहीं होता है, तो उसका आचरण न्यायालय की दांडिक अवमानना के समान हो सकता है। वास्तव में, बहुत कम अभिलेख अधिवक्ता ने अभिलेख अधिवक्ता संस्था की कार्य प्रणाली को बिगाड़ा है, जो मामूली राशि के लिए केवल अपने हस्ताक्षर देते हैं। इसमें शामिल अभिलेख अधिवक्ता मूर्खता के स्वर्ग में रह रहा है अगर वह सोचता है कि वह किसी भी न्यायालय के साथ लुका-छिपी खेल सकता है।

ऐसी अराजक स्थिति में, किसी भी "अर्ज़ी", "फ़र्ज़ी", "प्रॉक्सी अधिवक्ता" (जो

अधिवक्ता अधिनियम, 1961 या सर्वोच्च न्यायालय नियम, 1966 आदि के अंतर्गत नहीं आता) के लेबल के तहत अधकचरे अधिवक्ता को, इस गलत धारणा के तहत न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती कि उसे न्यायालय में उपस्थित होने के किसी भी अधिकार के बिना, चाहे वह वादी की ओर से हो या एओआर की ओर से, जैसा कि इस मामले में है, जनता का समय बर्बाद करने का अधिकार है। एओआर ने इस न्यायालय के उस आदेश का बेखौफ होकर तिरस्कार किया जिसमें उसे न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था। उसने न तो उपस्थित हुए अधिवक्ता के लिए कोई उपस्थिति दर्ज कराई थी और न ही उक्त अधिवक्ता ने उसका नाम बताया था। न्यायालय एओआर, श्री मनु शंकर मिश्रा के आचरण को गंभीरता से लेता है और उन्हें एक अधिवक्ता और एक एओआर के आचरण के अनुरूप उचित तरीके से व्यवहार करने की चेतावनी देता है अन्यथा यह न्यायालय उनके खिलाफ कार्रवाई करने में संकोच नहीं करेगा। उनके आचरण पर इस न्यायालय की कड़ी निगरानी रहेगी।

6. उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, याचिका खारिज की जाती है।

आर. पी. एसएलपी खारिज कर दी गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।